भारतीय व्यक्तित्व सिद्धान्त

डॉ0 आनन्द श्रीवास्तव*

सारांश

व्यक्तित्व शब्द बहुत व्यापक है। व्यक्तित्व के बारे में विभिन्न विद्वानों एवं मनोवेज्ञानिकों की धारणाएँ भिन्न–भिन्न है यही कारण है कि उसे आज तक न तो किसी निश्चित अर्थ से सम्बद्ध किया जा सका है और न ही किसी निश्चित सीमा में बाधा जा सकता है साधारणतया स्वीकार किया जाता है कि व्यक्तित्व विचित्र है जटिल है व्याख्या से परे है।

भारतीय मनोविज्ञान में यह माना गया है कि जीवात्मा व्यक्ति के अन्दर निवास करती है और यह भी माना गया है कि है कि व्यक्तित्व वह उपयुक्त चक्रयान है जिसके द्वारा अभिव्यक्ति और व्यक्ति की दैहिक और मानसिक संरचना में परिवर्तन तो होते है लेकिन जीवात्मा अपनी मूल अवस्था में ही रहती है। यह भी माना गया आध्यात्मिक अभिव्यक्ति होती है।

*गौतम बुद्ध के जो उपदेश और शिक्षा है, इन्ही के फलस्वरुप अभिधम्म सिद्धांत का विकास हुआ। अभिधम्म का अर्थ परम् सिद्धांत से है इस परम् सिद्धांत में एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व के आदर्श प्रकार का वर्णन है जिसमें मन को विशेष महत्व दिया गया है। अभिधम्म सिद्धांत में स्वस्थ व्यक्तित्व प्राप्त करने के लिए मार्ग या साधन बताया गया है। इस सिद्धांत में यह बताया गया है कि मनन **(Meditation)** के द्वारा व्यक्ति पूर्णस्वस्थ व्यक्तित्व की प्राप्ति कर सकता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व जो भी त्रुटियां है उन त्रुटियों को मनन के द्वारा व्यक्ति स्वस्थ व्यक्तित्व के मार्ग पर चल कर स्वस्थ व्यक्तित्व की प्राप्ति कर सकता है। अभिधम्म सिद्धांत में दो प्रकार के मनन का वर्णन किया गया है– 1 एकाग्रता मनन 2 सतर्कता मनन*

"आदर्श प्रकार का स्वस्थ व्यक्तित्व : अराहत "

अराहत शब्द का शाब्दिक अर्थ प्रशंसनीय है। अर्थात जिसकी सर्वत्र या सम्पूर्ण प्रशंसा हो उसे अराहत कहते हैं। व्यक्तित्व के संतुलित विकास हेतु चाणक्य ने शिक्षा को सबसे अधिक आवश्यक एवं अपरिहार्य माना है।

चाणक्य के अनुसार व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु विद्यार्थी को अपने कर्तव्यों के प्रति सजग और समर्पित होना चाहिए। विद्यार्थी के कर्तव्य की और ध्यान दिलाते हुए आचार्य कहते है कि जो विद्यार्थी विद्या प्राप्त करना चाहता है उसे सुख की अभिलाषा छोड़ देनी चाहिए। चाणक्य का मानना है कि व्यक्ति प्रभु की कृपा से ही निर्धन से धनी हो सकता है एक सामान्य पुरुष से राजा के पद तक पहुँच सकता है।

व्यक्तित्व के विकास हेतु निम्नलिखित बिन्दु भी महत्वपूर्ण है–

1. *जीवन मूल्यों की पवित्रता के लिए नैतिक शिक्षा।*
2. *अनुशासित जीवन के लिए नैतिक शिक्षा*
3. *भौतिकतावादिता के अवगुणों से बचने के लिए नैतिक शिक्षा।*
4. *चारित्रिक विकास के लिए नैतिक शिक्षा।*

श्री अरविन्द के अनुसार व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए अपने आपको जानना और संयमित करना आवश्यक है। जो जीवन लक्ष्यहीन होता है वह साथ ही सुखहीन भी होता है। हममे से प्रत्येक आदमी का एक लक्ष्य होना चाहिए परन्तु यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि जैसा हमारा लक्ष्य होगा वैसा ही हमारा जीवन भी होगा। हमारा लक्ष्य होना चाहिए उच्च, विशाल, उदार और उन्मुक्त। फिर हमारा जीवन एवं व्यक्तित्व हमारे लिए और दूसरों के लिए भी बहमूल्य हो जाएगा। परन्तु हमारा आदर्श चाहेजो भी हो , हम उसे तब तक पूर्ण रुप से प्राप्त नही कर सकते जब तक कि हम अपने अन्दर पूर्णता को नही प्राप्त कर लेते। अपनी पूर्णता को प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम अपने विषय में सचेतन होना, अपनी सत्ता के विभिन्न अंगो और उनकी अलग–अलग क्रियाओं के विषय में सचेतन होना। जब हम पूर्णता की इस मात्रा को प्राप्त हो जाएगें, जो कि हमारा लक्ष्य है तब हम देखेगें कि जिस सत्य की खोज हम कर रहे है वह चार प्रधान चीजों से बना है– प्रेम, ज्ञान, शक्ति और सौन्दर्य। सत्य के चारो रुप हमें अपने आप हमारी सत्ता के अन्दर अभिव्यक्त होगें। चैत्य पुरुष होगा, सच्चे और शुद्ध प्रेम का वाहन, मन होगा अभ्रान्त ज्ञान का यंत्र,प्राण प्रकट करेगा एक अदम्य शक्ति, सामर्थ्य, और शरीर पूर्ण सामंजस्य की प्रतिमा बन जाएगा।

श्री अरविन्द के अनुसार व्यक्तित्व की पूर्णता के लिए शिक्षा अत्यंत आवश्यक है और बिना उत्तम शिक्षा के उत्तम व्यक्तित्व का निर्माण असम्भव है।

---

* एसोसिएट प्रोफेसर, बुनियादी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, गाँधी विद्या मन्दिर, सरदारशहर, राज.

व्यक्तित्व शब्द बहुत व्यापक है। व्यक्तित्व के बारे में विभिन्न विद्वानों एवं मनोवेज्ञानिकों की धारणाएँ भिन्न–भिन्न है यही कारण है कि उसे आज तक न तो किसी निश्चित अर्थ से सम्बद्ध किया जा सका है और न ही किसी निश्चित सीमा में बाधा जा सकता है साधारणतया स्वीकार किया जाता है कि व्यक्तित्व विचित्र है जटिल है व्याख्या से परे है।

व्यक्ति के व्यक्तित्व का विशेष महत्व है परन्तु व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग कई अर्थो में किया जाता है कई विद्वान व्यक्तित्व को चरित्र का उद्‌गम स्थान मानते है कुछ व्यक्तित्व का अर्थ बाहय शारीरिक गठन आदि से लेते है। कुछ व्यक्ति व्यक्तित्व का अर्थ मानसिक विकास से लेते है वास्तव में व्यक्तित्व तो व्यक्ति के शारीरिक मानसिक तथा उसके बाहयरूप के विकास का दर्पण है । व्यक्तित्व तो वह समग्रता है जिसमें व्यक्ति के सम्पूर्ण आन्तरिक एवं बाहय गुणों व अवगुणों का समावेशित दिग्दर्शन होता है।

संसार का प्रत्येक व्यक्ति वातावरण के विभिन्न सरल से सरल और जटिल से जटिल परिस्थितियों में समायोजन अपने व्यक्तित्व गुणेां के आधार पर करता है इस समायोजन प्रक्रिया में जो व्यक्ति सफल होता है बहुधा उस व्यक्ति को हम समायोजित कहते हे। और जो व्यक्ति समायोजन करने मे असफल होता है उसे कुसमायोजित कहते है। बहुधा देखा गया है कि समायोजित प्रकार के व्यक्ति सामान्य कहें जाते है और इनका व्यक्तित्व संगठित प्रकार का होता है।

भारतीय दर्शन और भारतीय मनोविज्ञान में व्यक्तित्व और व्यक्तित्व से सम्बंधित प्रत्यय वेद, उपनिषद, गीता और रामायण आदि में वर्णित है। भारतीय दर्शन में जो भी व्यक्तित्व सम्बंधी विवरण मिलता है वह अलग–अलग प्रत्ययों के रुप में है। भारतीय मनोविज्ञान में व्यक्तित्व को जीवात्मा (Jivatman) का नाम दिया है।

जीवात्मा के सम्बंध में जो कुछ भी वर्णन है वह उसके नैतिक और आध्यात्मिक पक्ष से अधिक सम्बद्ध है। भारतीय मनोविज्ञान में यह माना गया है कि जीवात्मा व्यक्ति के अन्दर निवास करती है और यह भी माना गया है कि है कि व्यक्तित्व वह उपयुक्त चक्रयान है जिसके द्वारा अभिव्यक्ति और व्यक्ति की दैहिक और मानसिक संरचना में परिवर्तन तो होते है लेकिन जीवात्मा अपनी मूल अवस्था में ही रहती है। यह भी माना गया आध्यात्मिक अभिव्यक्ति होती

प्रमुख भारतीय दार्शनिकों के व्यक्तित्व सम्बंधी विचारों का विवेचन निम्नलिखित प्रकार से है–

गौतम बुद्ध का व्यक्तित्व सम्बंधी सिद्धान्त : अभिधम्म

गौतम बुद्ध (536–436 BC) ईसा से लगभग 600 वर्ष पूर्व हुए है। गौतम बुद्ध के जो उपदेश और शिक्षा है, इन्ही के फलस्वरुप अभिधम्म सिद्धांत का विकास हुआ। अभिधम्म का अर्थ परम् सिद्धांत से है इस परम् सिद्धांत में एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व के आदर्श प्रकार का वर्णन है जिसमें मन को विशेष महत्व दिया गया है।

अभिधम्म सिद्धांत में अट्‌टा शब्द आया है जिसका अर्थ आत्म (self) है। यह शब्द व्यक्तित्व शब्द के समान है। अभिधम्म में यह बताया गया है कि अट्‌टा स्थायी नही होता है यह अवैयक्तिक प्रकियाओं (Impersonal Processes) का योग है। व्यक्ति अवैयक्तिक प्रकियाओं से उसके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होती है। अट्‌टा में शारीरिक अंगों, विचारों इच्छाओं, स्मृतियों और संवेदनाओ इत्यादि का योग है।

अभिधम्म मे व्यक्ति की मानसिक क्षण प्रतिक्षण परिवर्तित होती रहती है साथ –साथ संवेदी वस्तुएं भी हर क्षण परिवर्तित होती रहती है अभिधम्म में मानसिक अवस्थाओं का अध्ययन करने के लिए अन्तर्दर्शन विधि (Introspection Method) का उपयोग होता है। इस विधि में साधना करने वाला व्यक्ति स्वयं अपनी मानसिक अवस्थाओं का एक क्रमबद्ध ढ़ंग से अन्तर्दर्शन करके अध्ययन करता है।

मानसिक अवस्था के कारक – मानसिक कारकों की कुंजी को पाली भाषा में काम (Kamma) कहा गया है। अभिधम्म सिद्धांत में मानसिक कारकों के दो भाग बताए गए है–

1. **कुशल कारक –**अर्थात पवित्र कारक, हितकारक कारक अथवा स्वस्थ कारक।
2. **अकुशल कारक–**अर्थात अपवित्र कारक, अहितकारक कारक अथवा अस्वस्थ कारक।

मानसिक अवस्था के तट्स्थ कारक

1. **फास्सा (Phassa)**– जिसका अर्थ संप्रत्यक्षण (Apperception) होता है फास्सा का अर्थ किसी वस्तु या उत्तेजना का व्यक्ति को मात्र ज्ञान होना।
2. **सान्ना (Sanna)**– जिसका अर्थ प्रत्यक्षण (Perception) होता है। सान्ना अर्थ है किसी वस्तु या उत्तेजना की प्रथम जानकारी होना।
3. **सेटीना (Cetana)**– जिसका अर्थ संकल्प शक्ति (Volition) होता है सेटीना का अर्थ है प्रत्यक्षण के प्रति अनुबंधित प्रतिक्रया (Conditioned Reaction)
4. **वेदना (Vedna)–** जिसका अर्थ भाव (Feeling) होता है। वेदना का अर्थ है वस्तु से उत्पन्न संवेदन अनुभूति।
5. **एकाग्रता (Ekaggata)–** जिसका अर्थ एक केन्द्रीयता (One Pioneers) होता है। एकाग्रता का अर्थ है किसी वस्तु विशेष पर ध्यान केन्द्रित करना।
6. **मनासिकारा (Manasikara)–** जिसका अर्थ है स्वतः ध्यान (Spontaneous Attention) है। स्वतः ध्यान का अर्थ जब किसी वस्तु के आकर्षण के कारण उस वस्तु की और स्वतः ही ध्यान चला जाता है। यह एक प्रकार का अनैच्छिक ध्यान है।
7. **जीवितीन्द्रीय (Jivitindriya)–** जिसका अर्थ है मानसिक ऊर्जा जीवितीन्द्रीय वह मानसिक ऊर्जा है जो उपरोक्त छह कारकों को ओजस्विता (Vitality) और संगठन प्रदान करती है।

उपरोक्त वार्णित सात तट्स्थ कारकों का सम्बंध चेतना के मौलिक ढ़ाचे से है । जिसके निम्न दो प्रकार के कारक होते है– 1 कुशल कारक 2 अकुशल कारक

1. अकुशल कारक (Unhealthy Factors)–

1 प्रत्यक्षणात्मक अकुशल कारक (Perceptual Unhealthy Factors)

2 संज्ञानात्मक अकुशल कारक (Cognitive Unhealthy Factors)

3 भावात्मक अकुशल कारक (Affective Unhealthy Factors)

2. कुशल कारक (Healthy Factors)–

1 संज्ञानात्मक स्वस्थ कारक (Cognitive Healthy Factors)

2 भावात्मक स्वस्थ कारक (Affective Healthy Factors)

व्यक्तित्व प्रकार (Personality Types) :– अभिधम्म नियमावली में व्यक्तित्व के तीन प्रमुख प्रकारों का वर्णन दिया हुआ है–

1. **संवेदी प्रकार का व्यक्तित्व (Sensual Type Personality) :–** संवेदी प्रकार के व्यक्तित्व वाला व्यक्ति सुन्दर होता है उसकी बातचीत से भद्रता का परिचय मिलता है इन व्यक्तियों के जीवन में कलात्मकता और क्रमबद्धता की अभिव्यक्ति होती है इस प्रकार के व्यक्ति अपने कार्यो को निष्ठापूर्वक करने वाले होते है। सुन्दर वस्तुओं के गुणो से विशेष रुप से प्रभावित होते है। इन गुणों के साथ इनमे कुछ ऋणात्मक गुण भी पाये जाते है। जैसे यह व्यक्ति कपटपूर्ण व्यवहार, हीनता और कामुकता की भावनाएं रखने वाले धूर्त प्रकार के व्यक्ति होते है।
2. **घृणित प्रकार का व्यक्तित्व (Hateful Type Personality) :–**घृणित प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति हठधर्मी प्रकार के होते है। इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों का व्यवहार और कार्य करने का ढ़ंग लापरवाही पूर्ण होता है इनका पहनावा व्यवस्थित प्रकार का नहीं होता है। ऐसे व्यक्ति क्रोधी और ईर्ष्यालु होते है तथा अनेकों बुराइयों से ग्रसित होते है।

3. **धोखेबाज प्रकार का व्यक्तित्व (Deluded Type Personality) :–** धोखेबाज प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति आलसी होते है। इनका अपने काम में मन नहीं लगता। ये जल्दी विचलित होते है तथा उदासीन प्रकार के व्यक्ति होते है। इन व्यक्तियों का व्यवहार जिद्दी और अड़ियल प्रकार का होता है यह दूसरे व्यक्ति की बातों पर सरलता से विश्वास कर लेते है और यह दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार का अनुकरण भी खूब करते है।

स्वस्थ प्रकार का व्यक्तित्व (Healthy Type Personality) :– अभिधम्म सिद्धांत में मानसिक रुप से स्वस्थ व्यक्ति वह व्यक्ति होता है जिसमें अकुशल कारक उपस्थित नहीं होता बल्कि कुशल कारक उपस्थित होते है। इस सिद्धांत में यह भी बताया गया है कि जब कुशल कारक अधिक प्रबल होते है तब व्यक्ति का व्यक्तित्व सामान्य बना रहता है और उसका मानसिक स्वास्थ्य भी सामान्य रहता है।

अभिधम्म सिद्धांत में यह भी पाया जाता है कि सामान्य व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों मे जो मानसिक अवस्थाएं पायी जाती है अनमे कुशल और अकुशल दोनो कारक पाए जाते है। इस सिद्धात में यह बताया गया है कि जब व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य अति उतम होता है तब उस व्यक्ति के मन में कोई अकुशल कारक उपस्थित नहीं होता है। मानसिक स्वास्थ्य की यह एक आदर्श स्थिति है जो हर व्यक्ति को साधारण रुप से प्राप्त नहीं होती है।

''स्वस्थ व्यक्तित्व की प्राप्ति का साधन : मनन''

अभिधम्म सिद्धांत में स्वस्थ व्यक्तित्व प्राप्त करने के लिए मार्ग या साधन बताया गया है। इस सिद्धांत में यह बताया गया है कि मनन (Meditation) के द्वारा व्यक्ति पूर्णस्वस्थ व्यक्तित्व की प्राप्ति कर सकता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व जो भी त्रुटियां है उन त्रुटियों को मनन के द्वारा व्यक्ति स्वस्थ व्यक्तित्व के मार्ग पर चल कर स्वस्थ व्यक्तित्व की प्राप्ति कर सकता है। अभिधम्म सिद्धांत में दो प्रकार के मनन का वर्णन किया गया है– 1 एकाग्रता मनन 2 सतर्कता मनन

1. **एकाग्रता मनन (Concentration Meditation) :–** एकाग्रता मनन, मनन की वह विधि है जिसको अपनाकर व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को स्वस्थ बना सकता है। इस विधि में मनन करने वाला व्यक्ति एक बिन्दु या वस्तु पर अपने ध्यान को केन्द्रित करता है अथवा एक वस्तु या बिन्दु पर अपने ध्यान को एकाग्रचित करता है। इस प्रकार के एकाग्रता मनन में व्यक्ति अपने ध्यान को कुशल कारक या स्वास्थ्यकर कारक पर एकाग्रचित करता है। ऐसा करने पर व्यक्ति मे गहन एकाग्रता उत्पन्न होती है।
2. **सतर्कता मनन (Mindfulness Meditation) :–** सतर्कता मनन के द्वारा भी स्वस्थ व्यक्तित्व का निर्माण किया जा सकता है मनन की इस विधि में साधक अपने ध्यान को एक वस्तु पर एकाग्रचित न करके अनेक प्रकार की वस्तुओं पर अपने ध्यान को एकाग्रचित करता है । साधक अनेक वस्तुओं पर ध्यान इस प्रकार लगाता है जैसे यह वस्तुए उसके सामने पहली बार उपस्थित हुई हो वह सभी वस्तुओं पर समान रुप से ध्यान देता है वह अनेक वस्तुओं में से किसी एक वस्तु को अधिक महत्व नही देता।

''आदर्श प्रकार का स्वस्थ व्यक्तित्व : अराहत ''

(Ideal type of Healthy Personality : Arahat)

अराहत शब्द का शाब्दिक अर्थ प्रशंसनीय है। अर्थात जिसकी सर्वत्र या सम्पूर्ण प्रशंसा हो उसे अराहत कहते है। जोन्ससन (Jonansson, 1970) ने अपनी पुस्तक निर्वाण का मनोविज्ञान (The Psychology of Nirvan) में अराहत व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों में निम्नलिखित प्रकार के गुण प्रमुख रुप से पाये जाते है–

1. अराहत व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों मे पक्षपात की भावना नहीं पायी जाती है।
2. ऐसे व्यक्तित्व वाले व्यक्त्यिों में धीरज की प्रबलता होती है । जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में यह व्यक्ति धीरज बनाए रखने में अग्रणी होते है।

3. ऐसे व्यक्तियों में शांति और मानसिक सतर्कता जैसे गुणों की प्रबलता पायी जाती है।
4. अराहत व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों में स्नेह, दयालुता और सहानुभूति पूर्ण भावों की प्रबलता होती है।
5. अराहत व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों में सही प्रत्यक्षीकरण करने की क्षमता पायी जाती है। यह वातावरण की वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण अपेक्षाकृत शीघ्रता से करते है।
6. अराहत व्यक्तित्व वाले व्यक्ति अपने कार्यो को पूरी क्षमता के साथ करते हैं यह अपने कार्यो को कुशलतापूर्वक और शांति भाव से करते है।
7. अराहत व्यक्तित्व वाले व्यक्ति दूसरो के सामने अपने विचारों को सुस्पष्ट रुप से रखते है। यह अपनी आवश्यकता को पहचानते है और उसके अनुरुप उपयुक्त क्रियाए करते है।
8. वानयुंग (Van Jung 1972) के अनुसार अराहत व्यक्तित्व वाले व्यक्ति अतिन्द्रियदर्शी स्वप्न अधिक देखने वाले होते है। यह वह स्वप्न है जो भविष्य की धटनाओं से सम्बंधित होते है।

अराहत व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों का व्यक्तित्व सन्तों के व्यक्तित्व से मिलता है यह व्यक्तित्व वह व्यक्तित्व है जिसका वर्णन मैसलो और रोजर्स ने अपने व्यक्तित्व सिद्धान्तों में पूर्ण आत्मसिद्ध व्यक्ति के रुप में किया है।

चाणक्य के व्यक्तित्व सम्बंधी सिद्धान्तः–

चाणक्य को भारत के इतिहास में एक ऐसा अनूठा व्यक्तित्व कहा जा सकता है जिसने एक असम्भव कार्य को सम्भव कर दिखाया। भारत के इतिहास की यह परम्परा रही है कि यहां समय –समय पर युगपुरुष होते रहे हे। चाणक्य भी एक ऐसे ही युग पुरुष माने जाते है। हजारों वर्षो के बाद भी चाणक्य का सम्मान उसी प्रकार स्थिर है जिस प्रकार उस काल में स्थिर था।

चाणक्य के पिता मगध के सीमावर्ती नगर के बाहर रहते थे उनका नाम चणक था चणक के पूत्र होने के कारण उनका नाम चाणक्य हुआ। चाणक्य को विष्णुगुप्त तथा कौटिल्य के नाम से भी जाना जाता है।

पाटलिपुत्र के राजा धननन्द ने एक बार राज्य सभा में प्रकाण्ड पण्डित चाणक्य का अपमान किया था। कुछ उस अपमान की ज्वाला और कुछ धननन्द के कुकृत्यों से पीड़ित चाणक्य नन्द विरोधी बन गए। नन्दवंशको उखाड़ फेंकने के बाद चन्द्रगुप्त को भारत की गद्दी पर पद स्थापित किया।

चाणक्य ने 'अर्थशास्त्र' नामक एक महत्वपूर्ण पुस्तक राज्य संचालन के सम्बंध में बहुत विस्तार से लिखी चाणक्य एक ऐसा व्यक्ति था जिसने भारत के अधिकांश भागो को मिलाकर एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की थी। चाणक्य की इस महान उपलब्धि के कारण उसे भारत का मैकियाविली कहा जाता है। पंडित नेहरु का कहना था कि चाणक्य की तुलना मैकियाविली से नही की जा सकती । चाणक्य मैकियाविली से कई दर्जे महान और चतुर कूटनीतिज्ञ था। चन्द्रगुप्त चाणक्य को अपने आदर्श गुरु के रुप में सम्मान देता था।

'चाणक्य नीति' चाणक्य का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। चाणक्य के शिक्षा सम्बंधी विचार एवं नैतिक शिक्षा तथा व्यक्तित्व सम्बंधी विचार चाणक्य नीति में मिलते है। इसमें कुल सत्रह (सप्तदश) अध्याय है। चाणक्य ने नीति, धर्म आचरण, व्यवहार, मित्र, स्त्री बालक सामाजिक व्यवहार आदि विषयों पर 'चाणक्य नीति' में प्रकाश डाला है। जिसके आलोक में शिक्षा दर्शन एवं शिक्षा मनोविज्ञान के महत्वपूर्ण तथ्यों को समझा जा सकता है।

चाणक्य के अनुसार, व्यक्ति को अपनी भीतरी योग्यता का ज्ञान होना चाहिए। जिसमें भीतरी योग्यता नहीं है और जो बुद्धिहीन है, वेद आदि शास्त्रों से भी उसका कल्याण नहीं हो सकता।

व्यक्तित्व के संतुलित विकास हेतु चाणक्य ने शिक्षा को सबसे अधिक आवश्यक एवं अपरिहार्य माना है। चाणक्य के अनुसार, ''मनुष्य के लिए विद्या कामधेनु के समान एक प्रकार का गुप्त धन है, कठिन समय में केवल यही फलदायक होती है परदेश में हो तो शिक्षा माता के समान पालन करती है।''

चाणक्य ने शिक्षा के दो प्रकार बतलाए है

1. कृतक (कत्रिम, बनावटी, नैमित्रिक)
2. स्वाभाविक (स्वतःसिद्ध)

चाणक्य के अनुसार विभिन्न स्तरों के माध्यम से शिक्षा की व्यवस्था निम्नानुसार होनी चाहिए–

1. **प्राथमिक स्तर –** शैशवावस्था में प्राप्त की जाने वाली शिक्षा को चाणक्य प्राथमिक स्तर की शिक्षा मानते है। इस स्तर की शिक्षा में भाषा के अन्तर्गत वर्णमाला तथा गणित स्तर पर अंकज्ञान को महत्व दिया गया है बाल्यावस्था की शिक्षा को भी प्राथमिक स्तर की शिक्षा में समाहित किया गया है।
2. **उच्च स्तर –** किशोरावस्था के बाद दी जाने वाली शिक्षा को उच्च स्तर की शिक्षा बताते हुए चाणक्य ने विविघ विधाओं के अन्तर्गत विभिन्न विषयों के ज्ञान पर चाणक्य ने जो प्रकाश डाला है उसे इस प्रकार दृष्टिगत किया जा सकता है–
    1. **त्रयी अर्थात वेद शिक्षा**– साम, ऋक तथा यजु तीनों वेदों का समान्वित नाम ही त्रयी है इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि चाणक्य कालीन शिक्षा में वेदों की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था। वेदों में अथर्ववेद और इतिहास पर बल दिया जाता था।
    2. **आन्वीक्षकी –** सांख्य योग और लोकायत (नास्तिक दर्शन) ये आन्वीक्षकी विद्या के अन्तर्गत है यह सूक्ष्म तत्वों का अन्वीक्षण कराने वाली दर्शन विद्या है।
    3. **वेदांगो की शिक्षा** – शिक्षा , कल्प, व्याकरण, निरुक्त विचिति और ज्योतिष छह वेदांग है। उस समय विचिति में विचार और चिन्तन एक विशिष्ट विषय के रुप में प्रचलित था।
    4. **वार्ता विद्या –** इसके अन्तर्गत कृषि, पशुपालना और व्यापार को लिया जा सकता है।
    5. **अन्य विद्याए**– इसमें अस्त्रशास्त्र, पुराण, इतिवृत्र, मीमांसा आरव्यापिका, धर्मशास्त्र आदि विषयों को लिया गया है। सामुद्रिका शिक्षा, ज्योतिष, व्याकरण आदि अंगो का शुभाशुभ फल बताने वाली विद्या, वशीकरण, इन्द्रजाल धर्मशास्त्र शकुनशास्त्र, पक्षीशास्त्र, कामशास्त्र आदि विद्याओं का प्रचार भी चाणक्य कालीन शिक्षा में था।

चाणक्य के अनुसार व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु विद्यार्थी को अपने कर्तव्यों के प्रति सजग और समर्पित होना चाहिए। विद्यार्थी के कर्तव्य की और ध्यान दिलाते हुए आचार्य कहते है कि जो विद्यार्थी विद्या प्राप्त करना चाहता है उसे सुख की अभिलाषा छोड़ देनी चाहिए। चाणक्य का मानना है कि व्यक्ति प्रभु की कृपा से ही निर्धन से धनी हो सकता है एक सामान्य पुरुष से राजा के पद तक पहुँच सकता है।

चाणक्य के अनुसार शिक्षार्थी के अन्दर निम्नलिखित गुण होने चाहिए–

1. **प्रयत्नशील**– चाणक्य के अनुसार विद्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशीलता आवश्यक है। चाणक्य के शब्दों में, कार्यसिद्धि के आकांक्षी व्यक्ति को चाहिए कि वह भोला भाला न बना रहे। बछड़ा भी दूध के लिए माता के अयनों पर आधात करता हे प्रयत्न न करने पर निश्चित ही कार्यो में विपत्रि आ जाती है।
2. **गुरु के स्वाभावानुसार व्यवहार**– शिक्षार्थी को चाहिए कि वह गुरु के स्वभाव के अनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन करें। चाणक्य के अनुसार शिक्षार्थी को चाहिए किस्वामी के स्वभाव को जानकर ही कार्य को सफल बनाए।
3. **सत्य का आचरण**– चाणक्य के अनुसार सत्य अपरिहार्य है। सत्य का त्याग करने वाला व्यक्ति किसी भी लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता चाणक्य के अनुसार ''सच्चा शिक्षार्थी ही सच्चा ज्ञान प्राप्त कर सकता है।''

4. **सदाचारी** – आचारविहीन को शिक्षा प्राप्त करने का कोई अधिकार नहीं है जो सदाचारी है वह सदैव दूसरे के विश्वास की रक्षा करता है। चाणक्य के शब्दों मे सदाचार का उल्लंघन नही करना चाहिए।
5. **गुणग्राहयता**– शिष्य को चाहिए कि वह दूसरे के गुणों का आदर करे बच्चे में भी उचित बात हो तो उसको ग्रहण करना चाहिए।
6. **अच्छी संगति**– शिष्य के लिए आवश्यक है कि वह सदैव अच्छी संगति में रहे। दुर्जन की संगति नहीं करनी चाहिए। गुणी पुरूषों के आश्रय से गुणहीन भी गुणी हो जाता है दूध में मिला हुआ जल भी दूध हो जाता है चांदी भी सोने के साथ मिलकर सोना ही हो जाती है।

प्रत्येक युग में नैतिक शिक्षा को अपरिहार्य माना गया है प्रत्येक राष्ट्र तथा समाज की अपनी संस्कृति, रीति रिवाज, परम्पराएं तथा दर्शन हुआ करते है। इसी के कारण समाज का अस्तित्व होता है तथा एक समाज दूसरे समाज से पृथक विशेषताएं रखता है। समाज अपनी संस्कृति तथा विशेषताओं की रक्षार्थ उन्हें एक पीढी से दूसरी पीढी को हस्तांतरित करता है। अतः शिक्षा का यह कर्तव्य है किवह धार्मिक विरासतों का हस्तान्तरण कर नैतिकता को प्रतिस्थापित करती रहें। जब तक धर्म और नीति का अभाव होगा तब तक व्यक्तित्व का संतुलित विकास संभव नही है। व्यक्तित्व के विकास हेतु निम्नलिखित बिन्दु भी महत्वपूर्ण है–

1. जीवन मूल्यों की पवित्रता के लिए नैतिक शिक्षा।
2. अनुशासित जीवन के लिए नैतिक शिक्षा
3. भौतिकतावादिता के अवगुणों से बचने के लिए नैतिक शिक्षा।
4. चारित्रिक विकास के लिए नैतिक शिक्षा।

चाणक्य के अनुसार व्यक्तित्व के संतुलित विकास के लिए नैतिक आदर्शों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। चाणक्य ने इन नैतिक आदर्शों को निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा स्पष्ट किया है–

1. **विनयशीलता**–चाणक्य विनय को अत्यधिक महत्व देते हे उनका कथन है कि ''अविनीत स्वामिलाभाद स्वमिलाभःश्रेृमान'' अर्थात अविनीत स्वामी के प्राप्त होने की अपेक्षा स्वामी का न मिलना श्रेयस्कर है। चाणक्य का मानना है कि विनयशील प्राणी ही अपनी इन्द्रियों को वश में रखकर आत्मोन्नति कर सकता है– ''राज्यमूलमिन्द्रिजयः इन्द्रियजयस्य मूलं विनयः''

   अतः चाणक्य स्पष्ट शब्दों में कहते है– ''अविनीत स्नेहमात्रेण न मन्त्रे कुर्वीत'' अर्थात विनयहीन व्यक्ति को एकमात्र स्नेह के कारण कभी भी सलाह के समय सम्मिलित नहीं करना चाहिए अतः स्पष्ट है कि चाणक्य विनयशीलता पर विशेष बल देते है तथा विनयहीन की नितान्त उपेक्षा करते है।
2. **आपत्ति के समय अपनों की सहायता**– वर्तमान भौतिक चकाचौंध ने हमे इतना सवार्थन्ध बना दिया है कि हम अपनी ही स्वार्थपरता देखते है। चाणक्य ने स्पष्ट कहा है ''आपस्तु स्नेह संयुक्त मित्रम'' अर्थात जो व्यक्ति आपत्ति के समय स्नेह से ही अपने साथ बना रहे वहीं मित्र है।
3. **व्यसनों से बचाव**– नैतिकता हमारा मार्गदर्शन करती है कि हम व्यसनों से दूर रहे। चाणक्य का कथन है ''न व्यसनपरस्य कार्यावाप्तिः'' अर्थात व्यसनों के चंगुल में पड़े हुए को कभी भी कार्य सिद्धि नहीं होती । प्रत्येक व्यक्ति के लिए व्यसनों का निषेध एक नैतिक उतरदायित्व है।
4. **मधुरभासी–** संस्कृत की यह उक्ति अपना महत्व स्वतः रखती है। ''सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात न ब्रूयात सत्यंआप्रियम्।'' चाणक्य भी इसी नैतिकता पर बल देते है कि वाणी की मधुरता अत्यधिक महत्वपूर्ण है।
5. **पुरूषार्थ**– चाणक्य के अनुसार ''पुरूषार्थ से कार्य को लक्ष्य बनाया जा सकता है'' चाणक्य मात्र भाग्य पर ही विश्वास नहीं करते उनका कथन है कि भाग्य भी पुरूषार्थ का अनुगमन करता हैं।

6. **दृढ़ निश्चय –**चाणक्य भी दृढ निश्चयी व्यक्ति को सफलता का श्रेय देते है, चंचल चित्तवृति का त्याग दृढ निश्चय की और बढ़ाने हेतु चाणक्य हमें उत्प्रेरित करते है, चाणक्य के अनुसार ''पूर्व में निश्चय करके कार्य का आरम्भ करना चाहिए किन्तु सोंचने के बाद कार्य को आरम्भ करने में विलम्ब नही करना चाहिए। चाणक्य दृढ़ निश्चय को कार्य की सफलता की कुंजी मानते है।''
7. **विचारशीलता का महत्व**–चाणक्य के अनुसार प्रत्येक स्थिति में विचारशीलता बनाए रखनी चाहिए। नीतिज्ञ व्यक्ति को चाहिए कि वह देश काल का भली भांति विचार कर ले। विचारशील व्यक्ति के पास लक्ष्मी चिरकाल तक बनी रहती है। भाग्यशील होने पर भी अविचारशील व्यक्ति को लक्ष्मी छोड़ देती है।
8. **आश्रितों का पालन**–चाणक्य ने आश्रितों का पालन करने को नैतिक कर्तव्य माना है। उनके अनुसार 'स्वजनों को भरपेट भोजन कराके जो अवाशिष्ट अन्न को खाता है वह अमृत को खाता है।' चाणक्य ने आश्रितों को खाना खिलाने के बाद स्वयं भोजन की नैतिकता पर बल दिया है।
9. **सदाचार का महत्व**–चाणक्य कहते है कि मनुष्यों में ऐसा पुरूष दुर्लभ होता है जो सर्वथा सरल स्वभाव का हो। तिरस्कार से उपलब्ध ऐश्वर्य को सत्पुरूष ठुकरा देते है। सदाचार का उल्लंधन नही करना चाहिए। चाणक्य के अनुसार मनुष्य को चाहिए कि सदा श्रेष्ठ पुरूषों के आचरण का ही अनुसरण करें।
10 **.दूसरे के धन का त्याग**– चाणक्य इस तथ्य पर बल देते है कि दूसरे के धन की तृष्णा कभी नही करनी चाहिए। दूसरे के वैभव की लिप्सा नही करनी चाहिए। चाणक्य के अनुसार 'दूसरे के द्रव्य का अपहरण करना अपने ही द्रव्य का नाश करना है।'
11 **.चोरी आदि बुरे कार्यो का त्याग**– भारतीय नीति शास्त्र में चोरी को सदैव पापमूलक माना है। चाणक्य भी कहते है कि चोरी से बढकर कोई भी दुखमूलक बन्धन नहीं है''न चौयत्पिरं मृत्युपाशः''
12 **.अहंकार व परनिन्दा का त्याग**– चाणक्य के अनुसार अहंकार से बढकर दूसरा शत्रु नहीं है ''नास्त्यंहकार सम शत्रुः''
13 **दान का महत्व**–चाणक्य के अनुसार दान करना धर्म है। वेश्यावृत्त से किया हुआ यह धर्म (दान देना) सफल नहीं होता है। मनुष्य के लिए दान धर्म न करना सर्वथा अनर्थकारी है। जैसा कोष हो वैसा ही दान दिया जाना चाहिए।

उपर्युक्त समस्त बिन्दुओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि चाणक्य व्यक्तित्व के विकास एवं आदर्श व्यक्तित्व के लिए नैतिकता को महत्वपूर्ण माना है।

चाणक्य का विचार था कि मनुष्य को अपने व्यक्तित्व को ऐसा बनाना चाहिए। जिससे कि समाज में उसकी प्रतिष्ठा बढे और वह अन्य लोगों के लिए अनुकरणीय बन सके। व्यक्ति के आत्मिक विकास के लिए मनुष्य के अन्दर कुछ आवश्यक गुणों का होना आवश्यक है तथा कुछ दोषों से बचना अथवा स्वंय को दुर्गुणों से विरत रखने की बात कही है जिसका विवेचन इस प्रकार है–

1. **आत्मोन्नति**–चाणक्य ने इस बात पर बल दिया है कि मनुष्य को चाहिए कि वह अपने आप को विज्ञान से सम्पन्न करता हुआ आत्मोन्नति करें। जब तक आत्मोन्नति नही होगी तब तक स्वयं उसे इस ज्ञान का आभाष नही हो सकेगा कि कर्तव्य एवं अकर्तव्य में क्या अन्तर है।
2. **आध्यात्मिक उन्नति**– चाणक्य के अनुसार पूर्ण व्यक्तित्व की प्राप्ति के लिए आध्यात्मिक उन्नति आवश्यक है । यह कार्य शिक्षा के द्वारा ही संभव है अतः शिक्षा इस प्रकार की होना चाहिए जो व्यक्ति को आध्यात्मिकता की और उन्मुख करे।
3. **आत्मबल**– संतुलित व्यक्तित्व की एक महत्वपूर्ण विशेषता आत्मबल है व्यक्ति में आत्मबल की वृद्धि के लिए चाणक्य ने योग की आवश्यकता पर बल दिया है योग के लिए योगशास्त्रों में रुचि पर चाणक्य ने प्रकाश डाला है।

4. **कर्तव्य पालन**–चाणक्य ने प्रत्येक वर्ण, वर्ग और जाति के लिए कर्तव्य निर्धारण में शिक्षा की भूमिका को अहम माना है कर्तव्यपालन इन्द्रियों को वश में किए बिना नही हो सकता।

उपरोक्त गुणों के अतिरिक्त चाणक्य ने कुछ दोषों की चर्चा भी की है चाणक्य कहते है कि कामवासना से बढकर कोई दूसरा रोग नही है, मोह से बढकर कोई दूसरा शत्रु नही है, क्रोध के समान कोई आग नहीं है।

चाणक्य का कहना है कि क्रोधव्यक्ति को हर समय जलाता रहता है मनुष्य जो कार्य करता है अच्छा या बुरा उसका फल उसे अकेले ही भोगना पड़ता है। वह अकेला ही इस संसार मे जन्म लेता है और अकेला ही मरता है स्वर्ग अथवा नर्क में भी वह अकेला ही जाता है केवल कर्म ही उसके साथ जाते है।

मनुष्य जब विदेश जाता है तो उसका ज्ञान और बुद्धि ही उसका साथ देती है घर में स्त्री मनुष्य की सहायक होती है औषधि रोगी व्यक्ति की सहायक होती है मृत्यु के बाद धर्म ही व्यक्ति का मित्र है।

चाणक्य का कहना है कि वर्षा के पानी से श्रेष्ठ दूसरा पानी नही मनुष्य का आत्मबल ही उसका सबसे बड़ा बल है मनुष्य का सबसे बड़ तेज उसकी आँखे है और उसकी सबसे प्रिय वस्तु अन्न है। इस संसार में जितने भी प्राणी है उनके मन मे कोई न कोई अभिलाषा अवश्य होती है जिन के पास धन नही होता वे धन चाहते है पशु संभवतः वाणी की इच्छा करते है मनुष्य स्वर्ग की और साधु लोग मोक्ष की कामना करते है।

सत्य की महत्ता बताते हुए चाणक्य कहते है कि सत्य के कारण ही दुनिया के कार्य व्यापार चल रहे है जबकि लक्ष्मी मनुष्य के प्राण और यह संसार सभी नश्वर है केवल धर्म ही शाश्वत् है अर्थात मनुष्य को अपनी रुचि धर्म में रखनी चाहिए।

जो मनुष्य शास्त्रों को पढता है अथवा उनके प्रवचन सुनता है उसे ज्ञान प्राप्त होता है और उच्च पद की प्राप्ति होती है। चाणक्य का कहना है कि मनुष्य जीवन बडे सौभाग्य से प्राप्त होता है। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह अपने जीवन को शुभ कार्यो की और लगाए दूसरों की निन्दा आदि करना छोड़ दे। वेद आदि शास्त्रों के पढ़ने और शुभ कार्य करने से मनुष्य इस संसार में यश को प्राप्त होता है। चाणक्य कहते है कि जिस मनुष्य के पास धन है उसके भाई, बन्धु मित्र सभी पैदा हो जाते है और उसे ही श्रेष्ठ पुरूष मान लिया जाता है। वह यह भी कहते है कि जैसी करना होती है मनुष्य की बुद्धि व कर्म भी उसी प्रकार के हो जाते है। इस संसार मे समय ही ऐसी वस्तु है जिसे टाला नही जा सकता। चाणक्य ने कहा है कि जब मनुष्य अपने स्वार्थ में अंधा हो जाता है तो उसे अच्छे या बुरे में अन्तर नही दिखायी देता । मनुष्य का छुटकारा अथवा बन्धन उसके द्वारा किये जाने वाले कर्मों पर ही आश्रित होते है क्योंकि वह जैसा कर्म करता है वैसा ही फल उसे भोगना पड़ता है अर्थात मनुष्य अपने कर्मो द्वारा ही संसार के बन्धन से मुक्त होता है। मोक्ष की प्राप्ति वही कर सकता है जिसने अपने व्यक्तित्व की पूर्णता प्राप्त की हो और अहंकार से मुक्त हो चुका हो।

श्री अरविन्द का सिद्धान्त :–

श्री अरविन्द का जन्म 15 अगस्त 1872 में हुआ था आपके परिवार में भारत और ब्रिटेन की जीवन धाराओं का विशेष मिश्रण था। श्री अरविन्द के अनुसार व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास हेतु व्यक्ति का शारीरिक प्राणिक, मानसिक तथा आत्मिक विकास अनिवार्य है अन्यथा उसका जीवन अपूर्ण रहता है और उसके भीतर पशुत्व दिखायी पड़ता है। यह विकास व्यक्ति की शिक्षा, वातावरण और ग्रहणशीलता पर निर्भर करता है। श्री अरविन्द के अनुसार '' जिस योग की साधना हम करते है उसका उद्देश्य है जगत में ईश्वर की इच्छा को कार्यन्वित करना एक आध्यात्मिक रुपान्तरण साधित करना और मनुष्य जाति के मनोमय, प्राणमय प्रकृति तथा जीवन के अन्दर दिव्य प्रकृति एवं दिव्य जीवन को उतार लेना। इसका उद्देश्य व्यक्तिगत मुक्ति नहीं है। हमारा उद्देश्य व्यक्तिगत रुप से आनन्द पाना नही, बल्कि हमारा उद्देश्य है दिव्य आनन्द को पृथ्वी पर उतार लेना।''

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य छात्रों के शरीर ,मस्तिष्क तथा आत्मा का सर्वागीण विकास करना है ताकि उनमें निहित दैवी सत्य को प्राप्त करने के लिए इन्हें उपकरण के रूप में प्रयुक्त कर सकें। शिक्षा का उद्देश्य छात्रों के स्वयं का समस्त रूप से विकास करने में सहायता देना है ताकि वे अपने आप को विश्व का एक अंग समझ सके क्योकि यह विश्व भी तो उनमें निहित सत्य की ही बहुरूपी अभिव्यक्ति मात्र है।

श्री अरविन्द के अनुसार योग की प्रक्रियाएं इस प्रकार है–

1. आत्मसमर्पण का संकल्प करना।
2. आत्मज्ञान के द्वारा अपने आपको आधार से पृथक करना।
3. सभी वस्तुओं और धटनाओं में भगवान के दर्शन करना।
4. कर्मफलों और स्वयं कर्मो को भी भगवद् अर्पण करना।

इस तरह अज्ञान से अहंकार से द्वन्दो से व कामवासनाओं से मुक्त हो जाना जिससे कि हम अपनी सत्ता में शुद्ध, मुक्त सिद्ध एवं आनन्दमय हो जाए।

श्री अरविन्द के अनुसार व्यक्तित्व के सर्वागीण विकास के लिए अपने आपको जानना और संयमित करना आवश्यक है। जो जीवन लक्ष्यहीन होता है वह साथ ही सुखहीन भी होता है। हममे से प्रत्येक आदमी का एक लक्ष्य होना चाहिए परन्तु यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि जैसा हमारा लक्ष्य होगा वैसा ही हमारा जीवन भी होगा। हमारा लक्ष्य होना चाहिए उच्च, विशाल, उदार और उन्मुक्त। फिर हमारा जीवन एवं व्यक्तित्व हमारे लिए और दूसरों के लिए भी बहमूल्य हो जाएगा। परन्तु हमारा आदर्श चाहेजो भी हो , हम उसे तब तक पूर्ण रुप से प्राप्त नही कर सकते जब तक कि हम अपने अन्दर पूर्णता को नही प्राप्त कर लेते। अपनी पूर्णता को प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम अपने विषय में सचेतन होना, अपनी सत्ता के विभिन्न अंगो और उनकी अलग–अलग क्रियाओं के विषय में सचेतन होना। जब हम पूर्णता की इस मात्रा को प्राप्त हो जाएगें, जो कि हमारा लक्ष्य है तब हम देखेगें कि जिस सत्य की खोज हम कर रहे है वह चार प्रधान चीजों से बना है– प्रेम, ज्ञान, शक्ति और सौन्दर्य। सत्य के चारो रुप हमें अपने आप हमारी सत्ता के अन्दर अभिव्यक्त होगें। चैत्य पुरुष होगा, सच्चे और शुद्ध प्रेम का वाहन, मन होगा अभ्रान्त ज्ञान का यंत्र,प्राण प्रकट करेगा एक अदम्य शक्ति, सामर्थ्य, और शरीर पूर्ण सामंजस्य की प्रतिमा बन जाएगा।

श्री अरविन्द क अनुसार व्यक्तित्व की पूर्णता के लिए शिक्षा अत्यंत आवश्यक है और बिना उत्तम शिक्षा के उत्तम व्यक्तित्व का निर्माण असम्भव है।

शिक्षा :– मनुष्य की शिक्षा उसके जन्मकाल से ही आरम्भ हो जानी चाहिए और उसके सम्पूर्ण जीवनभर चलती रहनी चाहिए। शिक्षा के पूर्ण होने के लिए उसमें पांच प्रधान पहलू होने चाहिए। इनका सम्बंध मनुष्य की पांच प्रधान क्रियाओं से होगा–

1. भौतिक
2. प्राणिक
3. मानसिक
4. आन्तरात्मिक
5. आध्यात्मिक

हम यहां शिक्षा के इन पांचों पहलुओं पर एक–एक करके विचार करेगें और उनका पारस्परिक सम्बंध भी समझने का प्रयत्न करेगें।

शरीर की शिक्षा :– शरीर की समस्त शिक्षा एकदम जन्म के साथ ही आरम्भ हो जानी चाहिए और सारे जीवन भर चलती रहनी चाहिए। शरीर की शिक्षा के तीन प्रधान रुप है–

1. शारीरिक क्रियाओं को संयमित और नियमित करना।

2. शरीर के सभी अंगो, क्रियाओंका सर्वांगपूर्ण प्रणालीबद्ध और सुसमंजस विकास करना।
3. अगर शरीर में कोई दोष या विकृति हो तो उसे सुधारना।

प्राण की शिक्षा :– सब प्रकार की शिक्षाओं में सम्भवतः प्राण की शिक्षा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। सर्वाधिक आवश्यक भी है फिर भी इसका ज्ञानपूर्वक तथा विधिवत् अनुसरण बहुत कम लोग करते है। इसके कई कारण है सबसे पहले इस विशेष विषय का जिन बातों से सम्बंध है अनके स्वरुप के विषय में मानव बुद्धि की कोई सुस्पष्ट धारणा नहीं है, दूसरे यह कार्य बड़ा ही कठिन हे इसमें सफलता प्राप्त करने के लिए हमारे अन्दर सहनशीलता, अनंत अध्यवसाय और सुदृढ़ संकल्प होने आवश्यक है।

प्राण की शिक्षा के दो प्रधान रुप है। ये दोनो ही लक्ष्य और पद्धति की दृष्टि से एक दूसरे से बहुत भिन्न है परन्तु दोनो ही एक समान महत्वपूर्ण है। पहला इन्द्रियों के विकास और उसके उपयोग से सम्बंध रखता है और दूसरा है उपने चरित्र के विषय मे सचेतन होना और धीरे–धीरे उस पर प्रभुत्व स्थापित कर अंत में उसका रुपान्तरण साधित करना।

हमें अपने स्वभाव का पूरा ज्ञान प्राप्त करना चाहिए फिर अपनी क्रियाओं पर ऐसा संयम प्राप्त करना चाहिए कि हमें पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त हो जाए और जिन चीजों को रुपान्तरित करना है उनका रुपान्तरण सभंव हो जाए।

मन की शिक्षा :– सब प्रकार की शिक्षाओं में सबसे अधिक प्रचलित है मन की शिक्षा। मन की सच्ची शिक्षा के, उस शिक्षा के जो मनुष्य को एक उच्चतर जीवन के लिए तैयार करेगी पांच प्रधान अंग है साधारणतय ये अंग एक के बाद एक आते है पर विशेष–विशेष व्यक्तियों में वे बदल बदलकर या एक साथ भी आ सकते है। ये पांचों अंग निम्नलिखित है–

1. एकाग्रता की शक्ति का, सजग होने की क्षमता का विकास करना।
2. मन को व्यापक, विशाल, बहुविध और समृद्ध बनाने की क्षमताएं विकसित करना।
3. जो केन्द्रीय विचार या उच्चतर आदर्श या परमोज्ज्वल भावना जीवन मे पथ प्रदर्शन का काम करेगी उसे केन्द्र बनाकर समस्त विचारों को सुसंगठित–सुव्यवस्थित करना।
4. विचारों को संयमित करना, अनिष्ट विचारों का त्याग करना जिससे मनुष्य अन्त में जो कुछ चाहे और जब चाहे तभी विचार कर सके।
5. मानसिक निश्चलता का परिपूर्ण शांति का और सत्ता के उच्चतर क्षेत्रों से आने वाली अन्तः प्रेरणाओं को अधिकाधिक पूर्णता के साथ ग्रहण करने की क्षमता का विकास करना।

जब हम अपनी इच्छानुसार मन को निश्चल–नीरव बनाना और ग्रहणशील निश्चल–नीरवता में उसे एकाग्र करना सीख जाएगें तब ऐसी कोई समस्या नही रह जाएगी जिसे हम हल न कर सके, ऐसी कोई मानसिक कठिनाई नही रह जाएगी जिसका कोई समाधान न प्राप्त हो जाए।

आन्तरात्मिक और आध्यात्मिक शिक्षा :– अन्तरात्मा की शिक्षा के द्वारा हम जीवन के सच्चे आशय पृथ्वी पर अपने अस्तित्व के कारण तथा जीवन की खोज के लक्ष्य और उसके परिणाम–अपनी नित्य सत्ता के प्रति व्यक्ति के आत्मसमर्पण के प्रश्न पर आते है। इस खोज का सम्बंध साधारणतया एक गुहय भाव तथा धार्मिक जीवन से है क्योकि विशेष रुप से धर्म मत ही जीवन के इस पहलू मे व्यस्त रहे है पर ऐसा होना आवश्यक नहीं। ईश्वर विषयक गुहय विचार के स्थान पर सत्य का अधिक दार्शनिक विचार आ सकता है फिर भी यह खोज सार रुप में वही रहेगी, केवल उस तक पहुँचने का मार्ग ऐसा हो जाएगा कि अत्यधिक आग्रहशील प्रत्यक्षवादी भी इसको अपना सकेगा, क्योकि आन्तरात्मिक जीवन की तैयारी के लिए मानसिक विचारों और धारणाओं का अधिक महत्व नही है।

आन्तरात्मिक उपस्थिति के द्वारा ही व्यक्ति का सच्चा आस्तित्व व्यक्ति और उसके जीवन की परिस्थितियों से सम्पर्क प्राप्त करता है। यह कहा जा सकता है कि आधिकांश व्यक्तियों मे यह उपस्थिति अज्ञात और अपरिचित रुप में पर्दे के पीछे से कार्य करती है। परन्तु कुछ में यह अनुभवगोचर होती है।

तथा इसकी क्रिया को भी पहचाना जा सकता है, बहुत ही विरले लोगों मे यह उपस्थिति प्रत्यक्ष रुप में प्रकट होती है। इन्हीं में इसकी क्रिया अधिक प्रभावशाली होती है ऐसे लोग ही एक विशेष विश्वास और निश्चय के साथ जीवन में आगे बढ़ते है, ये ही अपने भाग्य के स्वामी होते है। इस स्वामित्व को प्राप्त करने तथा अन्तरात्मा की उपस्थिति के प्रति सचेतन होने के लिए ही आन्तरात्मिक शिक्षा के अनुशीलन की जरुरत है।

आध्यात्मिक शिक्षा में मनुष्य का स्वीकृत लक्ष्य उसके वातावरण, विकास तथा स्वभाव की रुचियों के सम्बंध में मानसिक निरुपण मे भिन्न–भिन्न नाम धारण कर लेगा धार्मिक प्रवृति वाले उसे ईश्वर कहेगे उनका आध्यात्मिक प्रयत्न फिर इस रुपातीत परात्पर ईश्वर के साथ तादात्मय प्राप्त करने के लिए होगा न कि उस ईश्वर के साथ जो वर्तमान सब रुपों में है। श्री अरविन्द के अनुसार उच्च से उच्च सत्ता की मनुष्य कल्पना कर सकता है उसके प्रति पूर्ण समर्पण के आनन्द से अधिक पूर्व आनन्द और नहीं है कुछ उसे ईश्वर का नाम देते है कुछ पूर्णता का यदि वह समर्पण लगातार स्थिर भाव में तथा उत्साहपूर्वक किया जाए तो एक ऐसा समय आता है जब मनुष्य इस कल्पना से उपर उठकर एक ऐसे अनुभव को प्राप्त कर लेता है जिसका वर्णन तो नही हो सकता परन्तु उसका फल व्यक्ति पर प्रायः सदा एक समान होता है

सन्दर्भ सूचीः–

1. शर्मा, डॉ. आर.एन., कड़वासरा, ओम, शिक्षा मनोविज्ञान, प्रथमकालीन, साहित्य चान्डिका प्रकाशन, जयपुर, 2008, पृष्ठ संख्या 315
2. श्रीवास्तव, डॉ. डी.एन., वर्मा, डॉ. श्रीमती प्रीति, आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, श्री विनोद पुस्तक मंदिर आगरा–2, 2009, पृष्ठ संख्या 539
3. अग्रवाल, जे.सी., प्राराम्भिक शिक्षा मनोविज्ञान, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, 1992
4. ओड, डॉ. लक्ष्मीलाल के, शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2010, पृष्ठ संख्या 246
5. सिंह, शिव बहादुर, श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन, पृष्ठ संख्या 1–84
6. शर्मा, ओम प्रकाश, सम्पूर्ण चाणक्य नीति, व्याख्याकार विश्वामित्र शर्मा, अनु प्रकाशन वितरक, मनोज पब्लिकेशन, दिल्ली, 2007
7. पालीवाल, शिवकांत, वर्तमान सन्दर्भ में चाणक्य के शैक्षिक दर्शन की प्रासंगिकता का अध्ययन, (लधु शोध प्रबंध), IASE मान्य विश्वविद्यालय, गांधी विद्या मंदिर, सरदारशहर, 2012
8. श्रीवास्तव, डॉ. डी.एन., व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, पृष्ठ संख्या – 508–521

●